PUNE RESEARCH SCHOLAR ISSN 2455-314X
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY JOURNAL VOL 10, ISSUE 3

"रामदरश मिश्र की गज़लों के विविध स्वर"

डॉ. भरत अ. पटेल

हिन्दी विभाग,
विजयनगर आर्ट्स कॉलेज,
विजयनगर, जि. साबरकांठा
गुजरात, भारत

आधुनिक समय में हिन्दी के अनेक कवियों ने छुटपुट गज़लें लिखी हैं , परन्तु सर्वप्रथम दुष्यंतकुमार ने गज़ल को उर्दू से थोड़ा-सा अलगकर उसे हिन्दीत्व का स्पर्श दिया है । तत्पश्चात अनेक कवियों ने दुष्यंतकुमार के पथ को आगे बढ़ाते हुए गज़लें लिखीं । इनमें एक प्रमुख नाम हैं – रामदरश मिश्र का । वे बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकार हैं | उन्होंने कविता , कहानी , उपन्यास , आलोचना , यात्रा-वृत्तांत , आत्मकथा , संस्मरण , निबन्ध आदि विधाओं पर सफलतापूर्वक अपनी कलम चलायी है | पर उन्हें एक सशक्त कवि और मँजे हुए कथाकार के रूप में विशेष प्रसिद्धि प्राप्त हुई है | मिश्र जी एक ऐसे प्रगतिशील कवि हैं , जिन्हों ने अपनी गहरी संवेदनाओं को सहज , मार्मिक और निश्छल अभिव्यक्ति दी है | विशेषत: गीत लिखने की रुचि रखनेवाले मिश्र जी गज़ल के बढ़ते प्रचार-प्रसार को देखते हुए अपने को रोक न पाएँ और इसमें महारत प्राप्त करते हुए जमकर गज़लें लिखीं । १. बाजार को निकले हैं लोग २. हँसी ओंठ पर आँखें नम हैं ३. तू ही बता ए जिंदगी ४. ५१ गजलें ५. सपना सदा पलता रहा आया है ६. दूर घर नहीं हुआ आदि उनके प्रचलित गज़ल-संग्रह हैं ।

' ५१ गज़लें ' की भूमिका में मिश्र जी ने लिखा है – ' ये (गज़लें) कैसी हैं इसकी पहचान तो पाठक करेंगे , बाकी मेरी तो कोशिश रही है कि बोलचाल की भाषा में अपने और परिवेश के सुख-दु:ख और समय के सच को स्वर दे सकूँ | गज़ल पर अपने अधिकार का दावा न कल किया था न आज कर रहा हूँ | ' १ इस कथन में कवि की नम्रता के दर्शन होते हैं | बाकी इतनी संख्या और इतनी उत्कृष्ट गज़लें देने के बाद उनका गज़ल लिखने पर अधिकार बनता ही है | उनकी गज़लों के विविध स्वरों को प्रस्तुत करने का मेरा विनम्र प्रयास है |

मिश्र जी की एक बहुत ही प्रचलित गज़ल है – ' बनाया है मैंने ये घर धीरे धीरे ' | यह गज़ल कवि की अंतरंगता से सराबोर है , अर्थात शायर ने अपनी जिंदगी की दास्तान को , अपने स्वभाव और व्यक्तित्व को उजागर करने का प्रयास किया है –

" बनाया है मैंने ये घर धीरे-धीरे,
खुले मेरे ख़्वाबों के पर धीरे-धीरे।
किसी को गिराया न ख़ुद को उछाला,
कटा ज़िंदगी का सफ़र धीरे-धीरे। " २

वे कहते हैं कि मैंने अपनी जिंदगी को धीरे-धीरे सँजोया है | तिनका तिनका जोड़कर नीड़ का निर्माण किया है | मेरी जिंदगी की रफ्तार धीमी और साहजिक है | मैंने एक आम आदमी की तरह ख्वाब देखे हैं और उन्हें साकार करने की चेष्टा की है | मेरी जीवन-धारा शान्त और गंभीर रूप से बहती रही है | मैंने किसी से स्पर्धा नहीं की है , किसी को गिराकर आगे बढ़ जाने की दुर्वृत्ति कभी नहीं रही | जिंदगी का सफर धीरे धीरे कटता रहा । जहाँ लोग शॉर्ट कट रास्ता अपनाकर आगे बढ़ जाने की कोशिश करते हैं , वहाँ मैं भी पहुँचा , मगर साहजिक गति से | उत्तरप्रदेश के गोरखपुर जिले के पानी की प्राचीरों के बीच बसे हुए डुमरी गाँव में जन्मे और बड़े हुए मिश्र जी के सामने बड़ी-बड़ी महत्त्वकांक्षाएँ नहीं थी | फिर भी अनेकविध संघर्षो से जूझते हुए गिरते-उठते रास्ता बनता गया , जीवन चलता रहा । इसी गज़ल का एक शेर दृष्टव्य है , जिसमें अपने वतन की मिट्टी से उनका लगाव कितना मजबूत है -

' ज़मीं खेत की साथ लेकर चला था,
उगा उसमें कोई शहर धीरे-धीरे । ' ३

कॉलेज में प्राध्यापक की नौकरी करने के लिए मिश्र जी को गुजरात के बड़ौदा और अहमदाबाद जैसे शहरों में बसना पड़ा | कुछ वर्षों बाद दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रोफेसर के रूप नियुक्त हुए | इस प्रकार अहमदाबाद और दिल्ली जैसे महानगरों में बसने के बावजूद वे गाँव की मिट्टी की सुगंध को लगातार महसूस करते रहे , ग्राम्य-जीवन के अनुभवों को साहित्य में अभिव्यक्त करते रहे हैं | एक और गज़ल में वे कहते हैं –

" खेतों , खलिहानों में बिखरे थे कितने सपने टूटे
महँगा था बाजार बहुत लेकिन घर कितना सस्ता था
मैं पुकारता था खेतों की साँसों भरी हवाओं को

ज्यों-ज्यों हँसता शहर मुझे अपनी माया में कसता था । " ४

मिश्र जी को गाँव से बहुत लगाव था , पर गाँव-परिवार की अभावग्रस्त ज़िंदगी को देखते हुए जीविकोपार्जन के लिए शहर जाने की मजबूरी भी थी । गाँव की जमीन लिए निकले गज़लकार के मन में धीरे-धीरे कब शहर उग निकला पता ही नहीं चला । महानगर की भीड़भाड़ में रहते हुए भी वे अकेलापन महसूस करते हैं । बचपन के अपने मित्रों और उनसे जुड़ी यादें उन्हें बेकरार कर देती हैं –

" तन्हा तन्हा रहा सफर कुछ गो कि भीड़मय रस्ता था
अब तक उतरा नहीं पीठ पर बचपन में जो बस्ता था
कितने-कितने हमराही थे आँच लिए हमदर्दी की
लेकिन कोई ऐसा था जिसके बिन मौसम डँसता था । " ५

अपनी जीवनसंगिनी के साथ बीते जीवन के अनुभवों को वे इस प्रकार अभिव्यक्त करते हैं –

" सुख के दु:ख के पथ पर जीवन छोड़ता हुआ पदचाप गया
तुम साथ रही , हँसते-हँसते इतना लम्बा पथ नाप गया
तुम उतरी चुपके से मेरे यौवन वन में बन के बहार
गुनगुना उठे भौरें गुंजित हो कोयल का आलाप गया । " ६

मिश्र जी अपने गाँव की मिट्टी और प्रकृति से जुड़े कवि हैं । प्रकृति के विभिन्न रूपों एवं रंगों की अनेकानेक झाँकियाँ उनके गीतों और गज़लों में दृश्यमान होती हैं । काले बादलों का आगमन , मूसलाधार बारिश का होना और प्रकृति में नवसंचार होना उनकी इस गजल में रूपायित हुआ है –

" पानी बरसा धुआंधार फिर बादल आये रे
धन्य धरा का प्यार हुआ फिर बादल आये रे
धूल चिड़चिड़ी धुली , नहा पत्तियाँ लगी हँसने
प्रकृति लगी करने सिंगार , फिर बादल आये रे । " ७

देश-विभाजन की त्रासदी को अनेकानेक साहित्यकारों ने कहानियों ,उपन्यासों , कविताओं और गज़लों में उकेरने का भरसक प्रयत्न किया है । राजनीतिक स्वार्थपूर्ति के लिए धर्म के नाम पर हुए देश के बँटवारे में सिखों , हिंदुओं और मुसलमानों का कत्लेआम हुआ । इस पर मिश्र जी की वेदना कुछ इस प्रकार व्यक्त हुई है –

" क्यों बाँट लिया खुद को दो टुकड़ों में ए वतन
रोती हैं कहीं रात ; कहीं गाती सहर है

दौलत के , सियासत के नाग खेलते उधर
इस ओर जिंदगी में घुला उनका जहर है
तू भी तो बंट गया है मजहबों में ऐ खुदा
तुझ से ही तुझे मार रहा लख्ते जिगर है । " ८

आजादी के वर्षों बाद भी हिन्दू-मुस्लिम को लड़ाकर नेता लोग अपनी राजनीति की रोटियाँ सेकते रहे हैं । स्वतंत्रता-संग्राम के समय प्रजा को जो सुनहरे स्वप्न दिखाये गए थे , वे दशकों बाद भी साकार नहीं हो पाए। नेताओं की धनलोलुपता , कुर्सी-मोह , दोगलापन , भ्रष्टाचार , झूठे वादे आदि पर अनेक व्यंग्यकारों ने कशाघात किए हैं । इस संदर्भ में मिश्र जी की ये गज़ल देखने योग्य हैं – " है छीन रहा माइक उनका दिन-रात मायने शब्दों के

अब शब्द सभा में , संसद में बेहद घबराए चलते हैं
है तनिक कहाँ फुरसत उनको जो सुने गाँव की आवाजें
पर इक दिन ऐसा भी आता वे बिना बुलाए चलते हैं । " ९

अच्छे से अच्छे शब्दों , विधानों और सूक्तियों का नेताओं ने प्रजा को भ्रमित करने के लिए इतना दुरुपयोग किया है कि ये शब्द और वाक्य अपना मूल अर्थ खो बैठे हैं । संसद , विधानसभाओं और जनसभाओं में जन-कल्याण की बातें कही जाती है , पर कल्याण उनके परिवार का ही होता है । उन्हें गाँवों की अभावग्रस्त गरीब जनता के दु:ख-दर्द सुनने की फुरसत नहीं मिलती ।

मिश्र जी की गज़लें सामाजिक सरोकारों से भी जुड़ी हुई हैं । भारतीय समाज में विवाह-संस्कार से जुड़ी दहेजप्रथा की कुरीति से अनेक लड़कियों का जीवन नर्कागार बन जाता है । छोटे-बड़े शहरों में दहेज की लालच में अनेक युवतियों को जिंदा जला देने की शर्मसार घटनाएँ सामने आती रहती हैं । मिश्र जी का यह शेर इसे इस प्रकार बयान करता है –

" उत्सवों में गूँजकर रोती हैं फिर लपटों के साथ
बेटियाँ जलती रहीं , शहनाइयाँ बढ़ती गयीं । " १०

आज के इस युग में छोटी बच्चियों , लड़कियों और स्त्रियों के साथ छेड़खानी , बलात्कार और उनकी निर्मम हत्याओं की खबरों से अखबार भरे पड़े मिलते हैं । टेलीविज़न की न्यूज चैनलों पर ज़्यादातर ऐसी ही खबरें देखने को मिलती हैं । सरेआम सड़कों पर ऐसी घिनौनी हरकतें होती रहती हैं , पर इन्हें बचाने कोई आगे नहीं आता है । समाज की इस विद्रूप स्थिति को मिश्र जी ने इस प्रकार अनावृत कर दिया है –

" अधम हैं खेल रहे लड़कियों की अस्मत से
बचाव के लिए हर शख्स पराया क्यों है ?
बड़ों से बार-बार पूछ रहा है बचपन
यही जहाँ था दिखाना तो बुलाया क्यों है ? " ११

सन् २०१९-२० में आयी कोरोना नामक महामारी ने पूरे विश्व की मानव जाति के सामने अस्तित्व का खतरा खड़ा कर दिया है । यह जानलेवा वायरस नए-नए रूप लेकर बार-बार मौत का तांडव खेलने लगता है । इस तीव्रवेगी संक्रामक महामारी ने सारे रिश्ते-नातों को खत्म कर दिया है । इस वास्तविकता को मिश्र जी इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं –

" विश्व भर में बन के हाहाकार तू है छा गया
दर्द ने दी आज सीमा त्याग जालिम कोरोना
आदमी को आदमी से दूर तूने कर दिया
छा गया रिश्तों के पथ में झाग जालिम कोरोना । " १२

युगचेता साहित्यकार अपनी युगीन परिस्थितियों को , सामाजिक यथार्थ को अपनी रचनाओं में उकेरता है | रामदरश मिश्र समाजवादी विचारधारा के कवि हैं | अत: उनकी गज़लों में उनकी अंतरंगता और स्वानुभूति के साथ-साथ सामाजिक प्रतिबद्धता के भी दर्शन होते हैं |

संदर्भ-संकेत :

१. ' ५१ गज़लें ' , रामदरश मिश्र | (गज़ल-संग्रह की भूमिका से) ,
२. रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ , पृष्ठ – ७१ , संपादक: रघुवीर चौधरी |
३. वही , पृष्ठ – ७१
४. ' ५१ गज़लें ' , रामदरश मिश्र पृष्ठ – २०
५. ' ५१ गज़लें , रामदरश मिश्र पृष्ठ – २०
६. ' ५१ गज़लें ' , रामदरश मिश्र पृष्ठ – २८
७. ' ५१ गज़लें ' , रामदरश मिश्र पृष्ठ – १६
८. ' ५१ गज़लें ' , रामदरश मिश्र पृष्ठ – ३५
९. ' ५१ गज़लें ' , रामदरश मिश्र पृष्ठ – ६५
१०. ' ५१ गज़लें ' , रामदरश मिश्र पृष्ठ – ६४

११. ‘ ५१ गज़लें ’ , रामदरश मिश्र पृष्ठ – ४५
१२. amarujala.com